जाता है और निकल आता है। इसमें विशुद्ध की सोलह पंखुड़ियों में से प्रत्येक पंखुड़ी से दो-दो प्रधान तथा दस-दस अन्तर अर्थात् 192 राग तथा परन्तर राग उत्पन्न होते हैं। जो इन्द्र कुंडली द्वारा जाने जाते हैं। इसकी ध्यान साधना के लिए शीश, मुकुट, कर में वीणा, चार भुजा तथा अभय मुद्रा है।

अन्तर राग

भृकुटी स्थान में तीन पंखुड़ियों से युक्त आज्ञाचक्र की केन्द्र भूमि से उत्पन्न होकर झंपताल अर्थात् एक लघु, एक विराम, एक द्रुत सात मात्राओं से युक्त होता है। इसमें गांधार-ग्राम की चौथी विचित्रा (नि सा रे ग म प ध) मूर्च्छना है। पूर्वांग तथा उत्तरांग में निषाद तथा गांधार ग्रह, अंश, न्यास है। इसमें वशीत्व सिद्धि की प्राप्ति होती है। जिसमें सर्वभूत तथा भौतिक पदार्थ साधक के वश में हो जाते हैं परन्तु साधक किसी के वश में नहीं होता। इसमें आज्ञाचक्र की तीनों पंखुड़ियों में से प्रत्येक पंखुड़ी से दो-दो प्रधान तथा दस-दस अन्तर अर्थात् छत्तीस राग तथा परन्तर राग उत्पन्न होते हैं। इसकी ध्यान साधना ज्योति है।

शून्य राग

ब्रह्मरंध्र में हजार पंखुड़ियों से युक्त सुधाकर चक्र की केन्द्र भूमि से उत्पन्न होकर ध्रुव ताल अर्थात् तीन लघु, एक द्रुत चौदह-चौदह मात्रा से युक्त होता है। इसमें गांधार-ग्राम की सातवीं अलापा (म प ध नि सा रे ग) मूर्च्छना है। पूर्वांग तथा उत्तरांग में मध्यम तथा षड़ज ग्रह, अंश, न्यास है। इसमें इशितृत्व तथा यत्र कामावसाइत्व सिद्धियों की प्राप्ति होती है। जिसमें साधक को उत्पत्ति-प्रलय करने की सामर्थ्य तथा संकृप का पूरा होना प्राप्त होता है। इसमें सुधाकर की हजार पंखुड़ियों में से प्रत्येक पंखुड़ी से असंख्य राग उत्पन्न होते हैं। इसकी ध्यान साधना के लिए केवल अनाहत नाद का दर्शन अर्थात् योग होता है।

विष्णु राग

नाभि स्थान में दस पंखुड़ियों से युक्त मणीपूरक चक्र की केन्द्र भूमि से उत्पन्न होकर मठ ताल अर्थात् दो लघु, एक द्रुत दस मात्रा से युक्त होता है। इसमें मध्यम-ग्राम की पहली सोवेरी (म प ध नी सा रे ग) मूर्च्छना है। मध्यम ही ग्रह, अंश तथा न्यास है। इसमें महिमा सिद्धि की प्राप्ति होती है। जिसमें साधक अपने शरीर को महान् कर लेता है। मणिपूरक की दसों पंखुड़ियों में प्रत्येक पंखुड़ी से एक प्रधान तथा पांच अन्तर अर्थात् साठ राग तथा परन्तर राग उत्पन्न होते हैं। जो शेष नाग कुंडली द्वारा जाने जाते हैं। इसकी ध्यान साधना के लिए शीश मुकुट, शंख, चक्र, गदा, पद्म सहित चतुर्भुज रूप तथा अभय मुद्रा है।

ब्रह्म राग

हृदय स्थान में बारह पंखुड़ियों से युक्त अनाहत चक्र की केन्द्र भमि से उत्पन्न होकर अठताल अर्थात् दो लघु, दो द्रुत बारह मात्रा से युक्त होता है। इसकी गति में मध्यम-ग्राम की चौथी अर्थात् शुद्ध मध्या (सा रे ग म प ध नी) मूर्च्छना है। षड़ज ही ग्रह, अंश, न्यास होकर जन्म लग्न स्थान में पड़ता है। इसमें सिद्धि की प्राप्ति होती है, जिसमें साधक चन्द्रमा को हाथ से स्पर्श करता है। इसमें अनाहत की बारह पंखुड़ियों में प्रत्येक पंखुड़ी से एक-एक प्रधान तथा पांच-पांच अन्तर अर्थात् 72 राग तथा परन्तर राग उत्पन्न होते हैं। जो कमल कुंडली द्वारा जाने जाते हैं। इसकी ध्यान साधना के लिए चतुर्मुखी तथा अभय मुद्रा है।

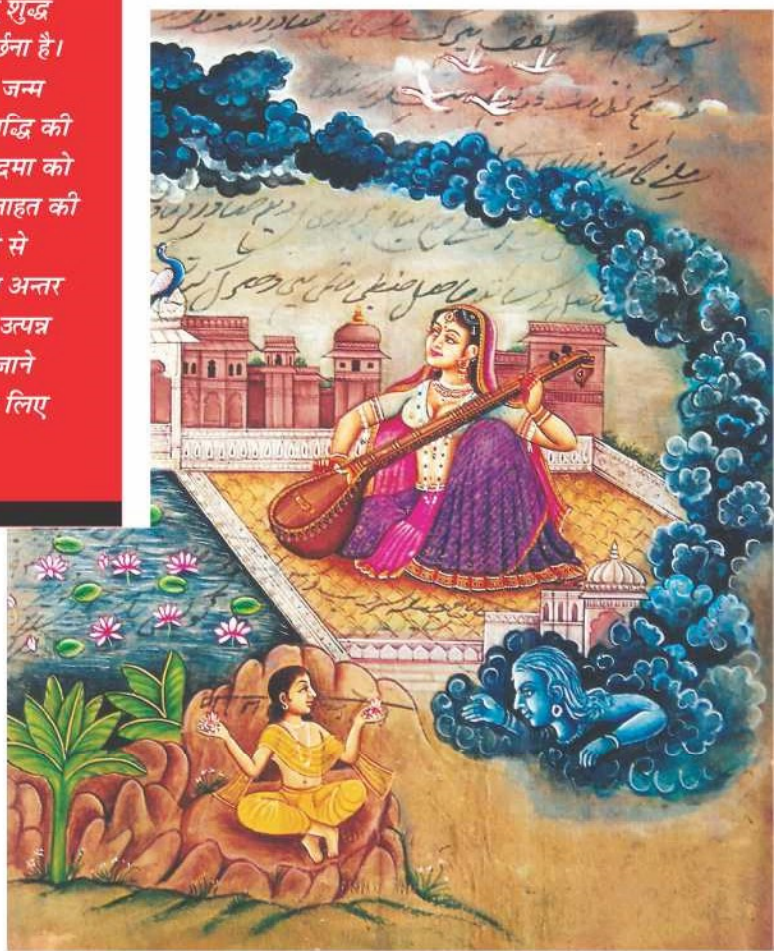

सरस्वती राग

कंठ स्थान में सोलह पंखुड़ियों से युक्त विशुद्ध चक्र की केन्द्र भूमि से उत्पन्न होकर त्रिपुट ताल अर्थात् एक लघु, दो द्रुत आठ मात्रा से युक्त होता है। इसमें गांधार-ग्राम की प्रथम नन्दा (ग म प ध नी सा रे) मूर्च्छना है। गांधार-ग्राम को निषाद- ग्राम भी कहा जाता है। निषाद-ग्राम मानने पर इसकी पहली मूर्च्छना (नी सा रे ग म प ध) होती है। अर्थात् इन दोनों ग्राम के क्रम में मूर्च्छनाओं का क्रम भी बदल जाता है। अत: गांधार-ग्राम को ही सर्वमान्य माना जाता है। इसमें पूर्वांग तथा उत्तरांग में गांधार तथा निषाद ग्रह, अंश, न्यास है। इसमें प्राकाम्य सिद्धि (इच्छा पूर्ण होने) की प्राप्ति होती है। जिसमें साधक मीन की भांति भूमि में डूब